International Journal of Applied Research 2021; 7(1): 479-483

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(1): 479-483
www.allresearchjournal.com
Received: 04-10-2020
Accepted: 06-11-2020

डॉ. विजय कुमार
प्राचार्य, हिन्दी विभाग,
ला०ना०मि० विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. विजय कुमार
प्राचार्य, हिन्दी विभाग,
ला०ना०मि० विश्वविद्यालय,
दरभंगा, बिहार, भारत

रूप रस के कवि घनानंद

डॉ. विजय कुमार

सारांश
घनानंद रीतिकालीन कविता को वेदना की स्वानुभूति से स्पंदित करने वाले एक मात्र कवि हैं। परिस्थितिवश प्रेम में ठोकर खाकर उन्होंने अपने लौकिक वासनात्मक प्रेम को परिष्कृत कर उदात्तता के उस शिखर पर पहुँचा दिया जहाँ उनकी प्रेमिका सुजान प्रेमाभक्ति के आलंबन पुरुष श्रीकृष्ण का पर्याय बन जाती है। एक एकान्त प्रेमी से कृष्ण भक्त तक का उनका सफर विविध मनोदशाओं से भरा हुआ है, जिसकी व्यंजना उनके काव्य में हुई है।

घनानंद रूप और रस के कवि है। रूप-चित्रण में उनका कोई जोड़ नहीं है। इसका कारण है कि कवि हृदय को किसी के रूप से रागात्मक संबंध है। विद्यापति या बिहारी जब नायिका के सौन्दर्य का चित्रण करते हैं तो एक तटस्थता का भाव झलकता है। घनानंद के सौन्दर्य-चित्रण में हृदय की प्रफुल्लनता है जो किसी प्रेमी कवि में ही संभव है। कवि ने मुहम्मदशाह रंगीले की दरबारी नर्तकी को नित नूतन रूप में देखा था जिसकी सुन्दर चित्रमयी अभिव्यक्ति उनके काव्य में हुई।

घनानंद अपनी कविता में 'प्रेम का पीर' बनकर उभरते हैं। सुजान के प्रेम में पगा कवि का हृदय उस समय हा! हा! खाकर व्यथित हो उठता है जब सुजान उसे धोखा दे देती है। परिस्थितिवश कवि उसी कातिल से न्याय की गुहार लगा रहे हैं, ईश्वरीय न्याय की दुहाई देते हैं – "कलपाओगे तो तुम भी कलपोगे"। तदन्तर हारे हुए प्रेमी हृदय का पर्यावसान हम एक कृष्णभक्त कवि के रूप में पाते हैं, उसी समर्पण के साथ। उन्हें संसार में सर्वत्र सुजान-ही सुजान दिखाई देता है। परिणाम स्वरूप वे अपने आराध्य को भी सुझान नाम से ही पुकारते हैं –

"सदा कृपा निधान हौ कहा कहौ सुजान हौ।"

'सुजान हित', 'सुजान सागर' आदि उनकी कृति उसी प्रेमिका को घनानंद का वियोग चित्रण हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। स्वयं कहते भी हैं – "जोग-वियोग की रीति मैं कोविद।" उनके वियोग की व्याप्ति में उनका भक्ति साहित्य भी आ गया है। प्रेम की पीड़ा सहने के कारण घनानंद की अभिव्यक्ति में मार्मिकता है जो उन्हें रीति मुक्त काव्यधारा के कवियों में विशिष्ट बनाता है। जहाँ अन्य कवि सप्रयास कविता बनाने का उद्योग करते दीखते हैं वहाँ भावुक घनानंद को कविता ही बनाती चलती है– "लोग हैं लागि कवित्त बनावत मोहि तो मेरे कवित्त बना बत।" भाव की मार्मिकता भाषा को भी मधुरता प्रदान करती चलती है। ब्रजभाषा का सुन्दर प्रयोग उनके कवितसवैयों में हुआ है।

कूटशब्द : रूप-चित्रण, जोग-वियोग, रीतिमुक्त काव्यधारा, कवि घनानंद, वियोगबेलि

प्रस्तावना

रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि 'प्रेम के पीर, 'ब्रजभाषा प्रवीण घनानंद का जन्म वर्ष संवत् 1746 के आस-पास तथा मृत्यु वर्ष संवत् 1796 है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार वे दिल्ली के निवासी थे और मुगल बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले के मीर मुंशी थे। उनके संबंध में अनेक प्रकार की जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं। एक जनश्रुति के अनुसार घनानंद को सुजान नाम की दरबारी नर्तकी से प्रेम हो गया था। परन्तु जब बादशाह ने घनानंद को दरबार से निकाल दिया तो सुजान घनानन्द के साथ जाने को तैयार नहीं हुई। दुखी होकर घनानंद सांसारिक जीवन से विरक्त हो गये और निम्बार्क संप्रदाय में दीक्षित हो भक्तिभाव में लीन रहने लगे।

भक्तिभाव में लीन रहने के बावजूद घनानंद सुजान को भूल नहीं पाये, किसी-न-किसी रूप में सुजान उनके जीवन पर छायी रही तथा उनके काव्य-संसार को भी प्रभावित करती रही। वे सुजान के सौन्दर्य और प्रेम में इतने मुग्ध थे कि अपने आराध्य श्री कृष्ण को भी सुजान कहकर संबोधित करते थे। पद से मीर मुंशी, विचार से स्वच्छंद, मन से कवि, हृदय से प्रेमी घनानंद को ब्रजभाषा और फारसी पर असाधारण अधिकार था। इनके समकालीन कवि ब्रजनाथ ने उन्हें 'ब्रजभाषा प्रवीन' कहा है-

> नेही महा, ब्रजभाषा-प्रवीन और सुंदरताई के भेद को जानै।
> जोग-वियोग की रीति में कोविद भावना भेद-स्वरूप को ठानै।
> चाह के रंग में भीज्यो हियो, बिछुरे-मिले प्रीतम सन्ति न मानै।
> भाषा-प्रवीन सुछंद सदा रहै, सो घनजी के कवित्त बटवानै॥

घनानंद विद्यापति की भाँति ही रूप-रस और सौन्दर्य के कवि हैं। अन्तर इतना है कि जहाँ विद्यापति परायी नायिका के सौन्दर्य का चित्रण करते हैं वहाँ घनानंद अपनी प्रेमिका सुजान के सौन्दर्य का वर्णन करते हैं। घनानंद के समकालीन बिहारी प्रेम-सौन्दर्य के कवि हैं परन्तु घनानंद के चित्रण में जो आत्मीयता, हृदयता और व्याकुलता है वह बिहारी में नहीं। आचर्या रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है- "प्रेम दशा की व्यंजना ही इनका अपना क्षेत्र है। प्रेम की गूढ़ अन्तर्दशा का उद्घाटन जैसा इनमें है वैसा हिन्दी के अन्य श्रृंगारी कवि में नहीं।" [1] इतना ही नहीं, शुक्ल जी यह भी मानते हैं कि जो स्थान मध्यकालीन प्रबंध काव्य में 'रामचरित मानस' का है वही स्थान इस काल में मुक्तक काव्य में घनानन्द कवित्त-सवैयों का है। कवित्त और सवैया इनका प्रिय छंद है जिसकी संख्या 752 मानी जाती है। घनानंद-रचित ग्रंथों की संख्या 41 कही जाती है जिसमें "सुजान हित", वियोगबेलि, "इश्कलता", "प्रेम-सरोवर" इत्यादि हैं।

रूप-चित्रण:

हिन्दी कविता में रूप-चित्रण/सौन्दर्य चित्रण की बात आती है तो हमारी दृष्टि सबसे पहले विद्यापति और बिहारी पर पड़ती है, घनानंद को प्रायः भीतरी सौन्दर्य का कवि माना जाता है। शुक्ल जी भी कहते हैं - "घनानंद ने न तो बिहारी की तरह ताप को बाहरी माप से मापा है न उछल-कूद दिखाई दी है। जो कुछ हलचल है वह भीतर की है- बाहर से वह वियोग प्रशांत और गंभीर है, न उनमें करवटे बदलना है, न सेज की आग की तरह तपना है, न उछल-उछलकर भागना है।" [2] परन्तु प्रीति जगाने में रूपराशि की ही भूमिका रहती है, इससे इंकार नहीं किया जा सकता, सुफी काव्यों में नायक रूप का गुणगान सुनने मात्र से बड़ा प्रेमी बन जाता है। घनानंद के सामने तो सौन्दर्य की प्रतिमा सुजान है जिससे घनानंद को बेहद प्रेम है। उसके प्रतिदिन के बदलते हुए श्रृंगार से जो नये-नये रूप बनते हैं उससे कवि अभिभूत है-

> रावरे रूप की रीति अनूप नयो-नयो लागत ज्यों-ज्यों निहारिए।
> त्यों इन ऑखिन बानि अनोखी, अधानि कहूँ नहीं आन तिहारिए।
> एक ही जीव हुतौ-सुतौ वारयो सुजान सकोच औसोच सहारिए।
> रोकी रहै न, दहै धन आनँद बावरी रीझ के हाथनि हारिए।।[3]

सौन्दर्य वहीं है जो 'तिल-तिल नूतन' होता हो, इससे विद्यापति भी सहमत हैं, क्योंकि इससे प्रीति भी नूतन चलती है-

> सखि, कि पूछसि अनुभव मोय
> से हो पिरीति अनुराग वखानइत तिल तिल नूतन होय।

सुजान एक नर्तकी थी परन्तु उसका लज्जावेष्टित रूप में घनानंद को दिवाना बना दिया था, उसकी तिरछी नजर ऐसा जादू

करता थी कि वे रूप-जाल के रहस्य में उलझ जाते थे। घनानंद कहते हैं कि वह सौंदर्य का भंडार है; उसकी मुस्कान से रस झरता है, प्रेम की बातें करती है तो उसके दाँतों की द्युति कवि के हृदय पर मोती की माला की-सी सज जाती है। उसकी अंगों का लावण्य ऐसा जान पड़ता है कि उसके अंगों में कामदेव दुल-मुल कर रहे हो -

लाजनि लपेटी चितवनि भेद भाव भरी
लसति ललित लोल चख तिरछानि मैं
छवि को सदन गोरो बदन रुचिर भाल
रस निचुरत मीठी मृदु मुसक्यानि मैं।
दसन दमकि फैली इिय मोती माल होति
पिये यों लड़कि प्रेम-पागी बतरानि मैं।
आनन्द की निधि जगमगति छबीली बाल,
अंगनि अनंग रंग दुरि मुरि जानि मैं।[4]

घनानंद सुजान के श्रृंगार और पहनावा का वर्णन करते हुए एक मानक प्रस्तुत करते हैं। वे गोरे शरीर पर काले पइनावे के प्रशंसक हैं जबकि जयशंकर प्रसाद नील परिधान के। प्रसाद जी ने कामायनी में श्रद्धा के लिए नील परिधान का चयन किया है-

नील परिधान बीच सुकुमार खुल हा मृदुल अधखुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग।।
आह वह मुख पश्चिम के व्योम बीच जब घिरते हो घनश्याम।
अरुण रवि मंडल उनको भेद, दिखाई देता हो छवि धाम॥ [5]

आश्चर्य है कि दो शताब्दी पूर्व ही घनानन्द यह सौन्दर्य दिखा चुके थे जिसमें घनश्याम भी है, धूम की पूँज में ज्वाल भी है और काली सारी के बीच गोरे शरीर की दमक भी है-

श्याम घटा लिपटी थिर बीज की सौहैं अमावस-अंक उज्यारी।
धूप के पुंज में ज्वाला की माल पै दृग सीतलता-सुख कारी।
कै छवि छायो सिंगार निहारि सुजान तिया-तन-दीपति प्यारी।
कैसी फ़बी घनानँद चोपनि सों पहिरी चुनी सॉवरी सारी।।[6]

घनानंद के रूप-चित्रण में मांसलता भी है। वह सुजान के शरीर की मांसलता के प्रति आकृष्ट है। किन्तु जब कवि सुजान के मुख मंडल का वर्णन करते हैं तब उसमें दिव्यता, उज्ज्वलता और छवि अंकन की पटुता होती है-

झलकै अति सुन्दर आनन गौर छके दृग राजत काननि छ्वै।
हंसि बोलन में छबि फूलन की वर्षा, उर ऊपर जाति ह्वै।

गौर मुख उस पर कानों तक आने वाली आँखें किसको तृप्त नहीं करती है? यह आँखों की सुन्दरता का प्रतिमान है और इसीलिए प्रशंसा में किसी को कमल-नयनी, मृगनयनी, सुलोचनी आदि कहा जाता है। विद्यापति ने 'सारंग नयन बयन पुनि सारंग तसु समधाने' कह कर आँखों के साथ ही 'तीर कमान भॅवें तेरी' का भी वर्णन किया है। विद्यापति की नायिका में बोली की मधुरता है, घनानंद की नायिका बोलती है तो फूल भी झड़ते हैं। इस फूल से घनानंद का हृदय प्रदेश उज्ज्वल हो जाता है। स्त्री-सौन्दर्य के चित्रण में केश-सौन्दर्य का वर्णन न हो तो वह वर्णन पूर्ण नहीं माना जा सकता है। जयशंकर प्रसाद ने श्रद्धा और इड़ा दोनों के केश विन्यास का सुन्दर वर्णन किया है- 'घिर रहे थे घुँघराल बाल अंस अवलंबित मुख के पास।' घनानंद का यह वर्णन अधिक सुन्दर है जहाँ केश कंधे पर नहीं कपोल पर खेल रहे हैं- ऊपर के सवैये का शेषभाग इस प्रकार से है-

लट लोल कपोल कलोल करै कल कंढ बनी जलजावति ह्वै
अंग-अंग तरंग उठै दुति की परिहे मनौ रूप अबै घरि च्वै।[7]
रूप चु जाने की बात साधारण जन बात-चीत में करते हैं, घनानंद ने रूप चुने की बात को कविता में ढ़ाल दिया है।

घनानंद के रूप-चित्रण में एक तल्लीनता है जो एक प्रेमी-हृदय के अनुकूल है। बिहारी रूप चित्रण में चमत्कार उत्पन्न तो करते हैं, परन्तु उसमें तल्लीनता नहीं देखी जाती है। सुजान के दाँतों की चमक घनानन्द के हृदय पर मोती-माल सी सुशोभित हो उठती है, हँसने पर फूलों की वर्षा होती है और वे घनानंद के हृदय पर छा जाते हैं, यह सब कवि का भावक और प्रेमी होने के कारण होता है। घनानंद एक कृष्ण भक्त कवि हैं और उन्होंने उनके सौन्दर्य का भी वर्णन किया है जिसपर अलग से विचार किया जा सकता है। परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि नायिका के रूप चित्रण में घनानंद संवेदनशीलता, प्रभविष्णुता, तल्लीनता तथा चित्रात्मकता लाने में सफल हुए हैं।

हिन्दी साहित्य में विरह-वर्णन की सुदीर्घ परम्परा रही है और एक से बढ़ कर एक श्रेष्ठ साहित्य की रचना हुई है। श्रृंगार के दोनों रूपों-संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार में वियोग की प्रधानता होती है, कारण है कि यह सबके मर्म को स्पर्श करता है। वास्तविक जीवन में वियोगानुभूति प्रेम की जीवन्तता, प्रगाढ़ता तथा सच्चाई का प्रमाण है। राम नरेश त्रिपाठी ने ठीक ही कहा है- "विरह प्रेम की शाश्वत गति है और सुषुप्ति मिलन है।" सचमुच, जीवन का प्रेम जो रस रूप में प्रकट होता वह वियोग में संचित रहता है, जैसे मधु मधु छत्ते में-

प्रेमहि माहि विरह रसरसा।
मैन के घर मधु अमृत बसा॥

सुमित्रानंदन पंत कविता की उत्पत्ति का स्रोत वियोगी हृदय को ही मानते हैं - "वियोगी होगा पहला कवि आह से निकला होगा गान।" इस विचार से वियोगी घनानंद ही हिन्दी के सच्चे कवि ठहरते हैं। उनका प्रेम सुजान नाम की एक रूपवती दरबारी नर्तकी से था। घनानंद उसके सौन्दर्य तथा नृत्य भंगिमाओं से घायल थे। सुजान के रूप-सौन्दर्य तथा अपने प्रेम का जो सुन्दर चित्रण घनानंद ने अपने कवित्त-सवैयों में किया है वह पीछे देखा पा चुका है। परन्तु सुजान घनानंद को ठुकरा देती हैं परिणाम स्वरूप वे मर्मान्तक पीड़ा से कराह उठते है। साहित्य जगत में यह पहली घटना नहीं थी, जनश्रुति के अनुसार तुलसीदास के साथ वैवाहिक जीवन में ऐसा ही कुछ हुआ था परन्तु इसे दुर्योग कहें या संयोग, हिन्दी में 'मानस' जैसा ग्रंथ रचित हुआ तथा घनानन्द को 'प्रेम के पीर' का ताज मिला।

प्रेम और विरह समानुपातिक होते हैं, जिस मात्रा में प्रेम होगा उसी मात्रा में विरह भी। सरल हृदय घनानंद प्रेम की मर्यादा प्रस्तुत करते हैं:–

अति सूधो स्नेह को मारग है, जहाँ नेक, सयापन बाँक नहीं।
तहाँ साँचे चलैं तजि आपन पौ, झुझकैं कपटी जे निसाँक नहीं। [8]

किन्तु घनानंद को ऐसी निष्ठुरता की उम्मीद नहीं थी। वे उपालंभ के स्वर में कहते हैं-

मीत सुजान अनीत करौ जिन, हा हा न हूजियै मोहि अमोही।
दीठि कौं और कहूँ नहिं ठौर, फिरी दृग रावरै रूप की दोही।

घनानंद 'हा! हा!' खा रहे हैं, अनीति न करने की दुहाई दे रहे हैं, क्योंकि अब उसका कोई दूसरा ठौर नहीं है। उसके प्राण रूपी बटोही को अभी भी आनन्दघन सुजान के प्रेम-जल की आशा है-

एक बिसास की टेक गहें, लगि आस रहे बसि प्रान बटोही।
हौ धन आनन्द जीवन मूल दुई, कित प्यासनि मारत मोही। [9]

इस अवस्था में आकर कवि बिल्कुल निःसहाय लगते हैं। इसी अवस्था में वे ईश्वरीय न्याय की याद दिलाते हैं- 'कलपाओगे तो तुम भी कलपोगे' -

सुनी है कि नाहीं यह प्रगट कहावति ज़ू
काहू कलपाय है सु कैसे कल पाय है।

घनानंद सुजान से प्रतिदान चाहते थे परन्तु अब वे समझ चुके हैं कि उसने मीठा-मीठा बोलकर सिर्फ उसे बहकाया है-

मीठे मीठे बोल बोलि ठगी पहिलें तौ तब
अब जिय जारत कहौ धौं कौन न्याय हैं। [10]

परिस्थितिवश घनानंद कातिल से ही न्याय की गुहार कर रहे हैं। आदिम रात्रि की महक का पारखी घनानंद सुजान के देह गंध से भी परिचित है। इसका आशय कि दोनों का प्रेम दूर-दूर का नहीं था। वे उसी देह गंध की चाह करते हैं। यहाँ प्रेम की गोपनीयता सार्वजनिक हो रही है। विद्यापति ने कहा है- 'चोरी प्रेम सांसारेरि सार' - छिपकर प्यार करना संसार का सार है। इस सार को सूरदास ने भी सार्वजनिक किया-

अतिमलिन वृषभानु कुमारी
हरि श्रमजल भोज्यो उर अंचल ताहि लालच न धुवावति सारी।

वह गंधवाह से कहता है- या तो मेरी भस्म उसके पास पहुँच दो या उसके देह की गंध मेरे पास ले आओ-

इत की भसम दसा लै दिखाय सकत जू
ललन सुबास सौ मिलाय हूँ सकत पौन।

वियोगावस्था में घनानंद ने प्रेम की मर्यादा को हानि भी पहुँचायी है। प्रेम का आदर्श तो त्याग और समर्पण में दीखता है।

परन्तु घनानंद प्रेम में लेन-देन की बात करते हैं। वे सुजान को संबोधित करते हुए कहते हैं-
घन आनंद प्यारे सुजान सुनौ, यहाँ एक तैं दूसरौ ऑक नहीं,
तुम कौन धौ पाटी पढे हौं कहौ, मन लेहु पै देहु छटॉक नहीं।[11]

इश्क में कोई हिसाब नहीं होता, ये सिलसिला मोसलसल है जिसमें कोई ठहराव नहीं होता, इस दृष्टि से घनानंद का नायक बेहद कमजोर ठहरता है। हिन्दी की जो विरहिणी नायिकाएँ हैं उसके सामने घनानंद का प्रेमी व्यकित्व एक क्षण के लिए बौना जान पड़ता है। उर्वशी के पीछे जिस प्रकार पुरुरवा परेशान था उसी प्रकार घनानंद दीखते हैं। दिनकर जी ने 'उर्वशी' को कामाध्यात्म की कविता बनायी तो पुरुरवाका सारा दोष घुल गया। घनानंद के साथ अच्छा संयोग हुआ कि वे कृष्ण भक्त हो गये और उनके विरह का पर्यावसान राधा-कृष्ण के विरह में हो गया-

सदा कृपा निधान हौ कहा कहौं सुजान हौ, अमानि दान मान हौ समान काहि दीजिए
पयोद मोद छाइए बिनोद को बढ़ाइए, बिलंब छाड़ि आइए किधों बुलाय लीजिए। [12]

घनानंद कृष्ण को ही सुजान कहने लगे। आखिर सुजान ही उनके यश का कारण हुई और उन्हें 'प्रेम के पीर' की उपाधि मिली। आचार्य शुक्ल 'घनानंद के बड़े प्रशंसक हैं, उन्होंने कहा है- "प्रेममार्ग का ऐसा प्रवीण और धरि कवि एवं जबाँदानी का दावा रखने वाला ब्रजभाषा का कोई दूसरा कवि नहीं हुआ।"

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, लेखक- आचार्य रामचंद्र शुक्ल, प्रकाशक प्रभात पेपरबैक्स, नई दिल्ली- 110002, पृ० 291
2. वही, पृ० 292
3. स्वर्ण-मंजूषा, संपादक-नलिन विलोचन शर्मा, प्रकाशक- मोतीलाल बनारसीदास, संस्करण- 1988
4. घनानंद कवित्त, लेखक - अमिताभ शाक्य, प्रकाशक- साहित्य सरोकार, आगरा - 282010 पृ० 49
5. कामायनी (श्रद्धासर्ग), जयशंकर प्रसाद
6. Hindi–kavita.com
7. घनानंद कवित्त, पृ० 50
8. स्वर्ण मंजूषा- 158
9. घनानंद कवित्त- पद 9, पृ० 58
10. वही, पद-7, पृ० 56
11. स्वर्ण मंजूषा- पद- 14, पृ० 158,
12. वही, पृ० 60 पद- 25